नवांकुर

मैं कविता नहीं लिखता

ललित कुमार झा

राजधानी की एक
ठसाठस भरी बस में
एक दिन
हुई मेरी मुलाकात
मेरे एक परिचित से
जो लिखते थे कविताएँ
बाग पर, बहारों पर
परिंदों की कतारों पर
उगते हुए सूरज पर
चंद्रमा की चाँदनी पर
किसी षोडसी के कोमल अंगों पर
या कि उसके नुकीले नयन कोरों पर
हुए थे पुरस्कृत
कई बार
उन लोगों से,
जिनकी वंदना में
गाते थे कोरस
असमय भी
छपती थी कविताएँ
पत्रिकाओं के
मुख पृष्ठों पर अकसर
या यों कहें कि वे पूरे कवि थे।

और सच्चे कवि की तरह
उस भीड़ में ही,
जहाँ दबा था उनका गला
किसी और के हाथों से
वे स्वतंत्र नहीं थे
हिलने को भी
वहीं वे चाहते थे
सुनाना
मुझे एक कविता
अभी हाल की ही लिखी हुई,
और मैं
चूँकि परिचित था उनका
टाल न सका आग्रह।

उन्होंने सुनाई कविता
कवित्व से सनी
रस, छंद, अलंकार से अलंकृत
सचमुच
किसी किताब के पृष्ठों में
अंकित करने योग्य
मैंने भी की प्रशंसा
कविता के अनुकूल ही।

अचानक उन्होंने मुझसे पूछा—
'आप भी तो लिखते थे कविता?'
मैं सकपकाया, बोला—
'हाँ, लिखता तो था
पर तब
जब नहीं देखा था
दुनिया को करीब से
अब,
जब भी बैठता हूँ
लिखने को कविता
सुनाई देती है चीख
मारे जाने की,
किसी हिंदू के
कश्मीर की वादियों में
या कि उभरती है तसवीर
गोधरा की किसी ट्रेन में
जलाए जा रहे निर्दोषों की
या कि किसी अक्षरधाम में
हो रही मानवता की हत्या की
या कि कहीं दूर
किसी सेंट स्टेंस को
ईसाई होने पर
जलाए जाने की
या कि किसी मुसलमान के कत्ल की
या कि कहीं मेरे करीब ही
रोती है कोई अबला
लुट जाने से आबरू
या कि कभी दिखाई देते हैं
भूख से बिलखते,
अभावों से ग्रस्त,
गुदड़ी में लिपटे
कृषकाय मजदूरों के बच्चे
मुझे होता है एहसास
दबाए जाने का
मेरा ही गला
किसी व्यवस्था के बंधन से
धीरे-धीरे उभरता है एक धब्बा
मेरे सफेद कागजों पर
जो कि लाल है
किसी निर्दोष के खून की तरह
मैं हो जाता हूँ भयभीत
किसी और अनिष्ट की आशंका से
और खो जाती है
मेरी चेतना
शून्य में,
इसलिए अब
मैं कविता नहीं लिखता।' □

जन्म : ३० अप्रैल, १९८० को।
शिक्षा : एम.ए., हिंदी (अध्ययनरत)।
हिंदी अकादमी एवं उर्दू अकादमी, नई दिल्ली द्वारा तथा महाविद्यालय स्तर पर अनेक पुरस्कारों से पुरस्कृत।

एच-१, एम.आई.जी. फ्लैट्स,
प्रसाद नगर, नई दिल्ली-११०००५